International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 23-01-2019; Accepted: 28-02-2019
www.hindijournal.com
Volume 5; Issue 2; March 2019; Page No. 36-39

मध्य प्रदेश में शास्त्रीय संगीत की ऐतिहासिक परंपरा एवं विकास

दीपक कुमार मित्तल [1], नीरा शर्मा [2]
[1, 2] राजा मानसिंह तोमर संगीत एवं कला विश्वविद्यालय, ग्वालियर, मध्य प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति की गौरवशाली परम्परा की अनन्य धरोहर, संस्कृति एवं सभ्यता का परिचायक, धर्मिक आध्यात्म की सशक्त बुनियाद, हमारा भारतीय संगीत सृष्टि के प्रादुर्भाव के समय से ही अखिल विश्व की प्रत्येक सजीव गतिविधि में व्याप्त रहा है। प्राचीन काल से ही यह हमारे आध्यात्मिक एवं भावात्मक जीवन का एक अभिन्न अंग माना जाता रहा है। क्योंकि मानवमात्रा की प्रत्येक क्रिया ही संगीतमय है। मानवमात्रा की कौन कहे, स्वयं जगत् के पालक

परम–पिता परमेश्वर ने भी संगीत का गुणगान किया है।
फ्नांह वसामि बैकुण्ठे योगिनां हृदयं न च।
मद्भक्ता यत्रा गायन्ति तत्रा तिष्ठामि नारद।।[1]

अर्थात् जीव, ईश्वर, विशु (चिंतन; ज्ञानद्ध, जीव और ईश्वर का भेद, अविद्या तथा स्त्रोात–विद्या, एवं चित्त ;ज्ञानद्ध का संबंध है, ये छः अनादि हैं। संगीत ईश्वरीय वाणी है, अतः यह स्वयं ब्रह्म ही है, शास्त्रों से ज्ञात होता है कि ब्रह्म, अखंड एवं अद्वैत होते हुए भी परब्रह्म और शब्दब्रह्म–इन दो रूपों में कल्पित होता है शब्द–ब्रह्म को भली भांति जान लेने से परब्रह्म की प्राप्ति होती है–

फ्शब्दब्रह्मणि निष्णातः परब्रह्माधिगच्छति।[2]

संगीत का अर्थ एवं परिभाषाएँ

संगीत मानव की एक कलात्मक उपलब्धि है, यह लयकारी सांस्कृतिक परम्पराओं का एक मूर्तिमान प्रतीक है और भावना की उत्कृष्ट कृति है, अमूर्त भावनाओं को मूर्त रूप देने का माध्यम है, इसमें हृदयस्पर्शिता है और यह मानव, सृष्टि तथा प्रकृति के रोम–रोम एवं कण–कण में व्याप्त है। संगीत, अखंड, असीमित तथा अनन्त है।

संगीत को म्यूजिक या मौसिकी भी कहते हैं। वर्तमान संगीत का जो स्वरूप हमारे सामने है, वह एक लम्बी यात्राा का परिणाम है। प्राणी मात्रा के रौदन, चीत्कार तथा हंसने आदि क्रियाओं से जनित ध्वनियां निर्बाध, निरपवाद रूप से सदा एक जैसी ही रही हैं।[3]

वाद्य, गीत का अनुयायी है तथा नृत्य, वाद्य का अनुगामी माना गया है, इसी कारण इसे फ्सवाद्यंय या फ्सनृत्यय उद्बोध्न न देकर फ्संगीतय नाम से अभिहीत किया गया है। 'संगीत रत्नाकर' में शारंगदेव ने संगीत को इस तरह से परिभाषित किया है–

गीतंवाद्यं तथा नृत्यं त्रायं संगीतमुच्यते।[4]

अर्थात् गीत, वाद्य और नृत्य ये तीनों मिलकर संगीत कहलाते हैं। इन्होंने भी इन तीनों में गीत को प्रधनता दी है, क्योंकि गीत मानव कंठ की सहज विभूति है। संगीत का पारिभाषिक अर्थ थोड़ा व्यापक है 'सम' का अर्थ है, 'सह' यानी साथ–साथ अथवा मिलकर। कोष के अनुसार संगीत का अर्थ है, वह गायन जो नृत्य और वाद्ययंत्रा के साथ गाया जाए।

संगीत को पारिभाषित करते हुए वाणी भाई रामजी, ग्लिमफिसस ऑफ इण्डियन म्यूजिक में लिखते हैं– Sangeet is a technical term generally used far vocal, instrumental and dance music and all these three arts are known as "Sangeet". This has been coming down from generation to generation and was very much appreciated and enjoyed by one and all throughout the universe alike.[5]

संगीत मनोरंजन का उतना ही विशाल माध्यम है, जितना यह आध्यात्मिक जीवन में। संगीत एक रसदायक ललित कला है। इसके बिना मानव जीवन नीरस एवं फीका है। यह किसी भी संस्कृति को जीवंत रखने में सबसे अहम् भूमिका निभाता है।

मध्य प्रदेश के शास्त्रीय संगीत की वैभवशाली ऐतिहासिक परंपरा और विकास के क्षेत्र में राजा मानसिंह तोमर, संगीत सम्राट तानसेन, स्वामी हरिदास, बैजू बावरा तथा अन्य कई संगीतज्ञों का योगदान रहा हैं। जिसका संक्षेप में वर्णन निम्मानुसार हैः–

1. राजा मानसिंह तोमर

मानसिंह तोमर का समय पन्द्रहवीं शताब्दी माना जाता है। ग्वालियर के तोमर वंशीय राजाओं में मानसिंह तोमर का नाम अतयंत प्रसिद्ध है। महाराजा मानसिंह तोमर एक सफल शासक होने के साथ–साथ एक सफल संगीतज्ञ भी था। ये संगीत के कलाकारों का आदर करते थे। इनके दरबार में बैजू, बख्शू, चरजू, भगवान तथा रामदास आदि अनेक गायक और वादक रहा करते थे।[6]

अबुल फ़ज़ल द्वारा लिखित 'आइन–ए–अकबरी' में इस बात की विस्तार से चर्चा की गई है कि मुग़ल सम्राट अकबर के दरबार में मौजूद 36 ऊँचे दर्जे के कलाकारों में से 15 कलाकार ग्वालियर–परंपरा के ही थे। इसी तरह मुग़ल शहंशाह जहाँगीर व औरंगज़ेब के समय में भी ग्वालियर पूरे उत्तर भारत का महानतम् सांस्कृतिक केन्द्र था, क्योंकि कश्मीर के मुग़ल गर्वनर फ़कीरुल्ला खाँ ने अपने संगीत ग्रंथ 'रागदर्पण में ग्वालियर को हिन्दुस्तान का शीराज़ कहा है।[7]

'मानकुतुहल' नामक ग्रंथ की मौलिक प्रतिलिपि प्राप्त नही है किन्तु राजा मानसिंह द्वारा लिखी गई वाणीकार की विशेषताओं से इस ग्रंथ का परिचय प्राप्त हो जाता है। राजा मानसिंह का कहना है कि संगीतज्ञ को भाव रस छंद व्याकरण तथा लोकरीति से भलीभांति परिचित होना अत्यन्त आवश्यक है।[8]

तोमर कालीन ग्वालियर की संगीत कला साधना भारत के मध्यकालीन सांस्कृतिक इतिहास में सर्वमान्य और अतीत की महत्वपूर्ण घटना कही जा सकती है। भारत में जो मुस्लिम बादशाह हुए उनके दरबारों में ईरानी संगीत का प्रभाव पड़ने लगा। भारतीय ईरानी संगीत को स्थापित कराने का श्रेय अमीर खुसरों को जाता है।[9]

ग्वालियर के तोमर राजाओं के लगातार प्रयासों, संगीत के महान आयोजनों के कारण भारत में संस्कृति व संगीत विष्णुपद तथा ध्रुवपद गायन शैलियों का विकास हुआ। ध्रुवपद की चार वाणियों की प्रतिष्ठा तथा धमार और होरी के प्रचार–प्रसार में काफी

सफलता मिली। तोमर काल की समाप्ति के बाद भी ग्वालियरी संगीत देश भर में फैला, उसे मुग़ल शहंशाहों के दरबार से लेकर सम्पूर्ण उत्तर भारत में भी मान्यता मिली। दिल्ली के कुतुबमीनार के आसपास हाल ही में की गई खुदाई से शिलालेख व कुछ अभिलेख मिलें है जिनसे तोमरों के इतिहास की जानकारी मिलती है। डॉ॰ हरिहर निवास ने 'ग्वालियर के तोमर' नामक पुस्तक में तोमरवंश के बारे में विस्तार से लिखा है।[10]

मानसिंह का काल, ग्वालियर में साहित्य, कला और संस्कृति के चरमोत्कर्ष का काल था। यही ब्रजभाषा के विकास का भी काल है। अष्टछाप से पहले भारतीय संगीत के पुनरुत्थान एवं ब्रज भाषा के स्वरूप निर्धारण के प्रयासों को प्रेरणा और संरक्षण देने वाले मानसिंह को मध्यकाल में साहित्य संगीत की पुनः संगति बिठाने का श्रेय दिया जाता है। सन् 1519 ई0 में राजा मानसिंह तोमर का देहांत हो गया।

एक अन्य खोज के अनुसार फरिश्ता के इतिहासके शुरू में इस इलाके में संगीत के विकास के सम्बन्ध में एक मनोरंजक उल्लेख है। मालवा में ऐसी कई कथाएं प्रचलित है, जिसमें यह कहा गया है कि माल चन्द्र नमक व्यक्ति संगीत को दक्षिण से ग्वालियर लाया। उसमें लिखा है संगीत का विकास हिन्दुस्तान में मालचन्द्र द्वारा किया गया था।[11]

संगीत के इतिहास पर दृष्टिपात करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि ध्रुवपद–शैली में चारों बानी का प्रचलन संगीत सम्राट तानसेन के पहले नही था। ध्रुपद की चारों बानियों की चर्चा स्वयं संगीत सम्राट तानसेन द्वारा रचित ध्रुवपद में इस प्रकार की गई यथा–

बनी चारों के व्यवहार, सुनी लीजै हो,
गुनिजन, तब पावै यह विद्यासागर
राजा गुबरहार फौजदार खण्डार
दीवान डागुर बक्शी नौहार।।
अचल सुर पंचम, चल सुर
रिषभ, मध्यम, धैवत निषाद, गंधार।
अचल तीन ग्राम इक्कीस मूर्छन बाइस सुरति उनचास,
कोटि तान तानसेन आधार।[12]

उल्लेखनीय है कि राजा मानसिंह जिन्हे सभी मर्मज्ञ, ध्रुवपद का प्रवर्तक व प्रचारक मानते है। उनके समय से आज तक के इतिहास में ध्रुवपद की रचना ग्वालियरी भाषा में हुई। संगीतकार चाहे पंजाब के हो या बंगाल के, दक्षिण भारत या नेपाल के, हिन्दु हो या मुस्लिम, सभी ने ध्रुवपद का गायन ग्वालियरी भाषा में ही किया।

2. संगीत सम्राट तानसेन

निस्संदेह, संगीत शब्द से जिन व्यक्तियों को थोड़ा भी प्रेम होगा, वे तानसेन के नाम से भलिभांति परिचित होंगे। यद्यपि इस महापुरूष की मृत्यु हुए लगभग चार सो वर्ष हो चुके है। फिर भी संगीत संसार में इसकी विमल कीर्ति आकाश्श के सूर्य के समान प्रदीप्त हो रही है। आगे की पक्तिंयों में हम इस महान संगीतकार का संक्षिप्त जीवन–परिचय पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहे है।[13]

आईने अकबरी' में अबुलफ़जल ने तानसेन के विषय में लिखा है कि ऐसा महान गायक पिछले एक हजार वर्षों में नही हुआ। यह कथन पूर्णतया सत्य मालूम पड़ता है। भारत का कौन ऐसा व्यक्ति होगा जिसने तानसेन का नाम न सुना होगा। संगीत–जगत क्या, साधारण व्यक्ति भी उनके नाम से परिचित है।[14]

मूर्धन्य कवि सूरदास ने तानसेन की प्रशस्ति इन शब्दों में की है।

भलो कियो विधिना दिये शेषनाग क कान।
धरा मेरू सब डोले तानसेन की तान।।[15]

तानसेन अकबरी दरबार के नव रत्नों में से एक थे। अपने स्नेहियों के वियोग मे अकबर द्वारा लिखा गया यह तानसेन के प्रति अकबर के सम्मान का परिचायक है

पीथल सों मजलिस गई, तानसेन सौं राग।
हंसिबों, रमिबों, बोलिबो, गयो बीरबल साथ।।[16]

तानसेन का समय सोलहवीं शताब्दी माना जाता है। तानसेन का जन्म ग्वालियर के बेहट नामक गॉव में हुआ था। इनके पिता का नाम मकरन्द पाण्डेय था। इनके पिता संगीत के महान् कलाकार थे। इसलिए वे अपने समय के अत्यन्त लोकप्रिय संगीतज्ञ थे। सन् 1506 ई0 में तानसेन का जन्म हुआ था। तानसेन के बचपन का नाम रामतनु था बाद मे वह तन्ना मिश्र कहलाने लगे और अन्त मे तानसेन के नाम से प्रसिद्ध हुए।

एक मात्र पुत्र होने के कारण इनके माता पिता इन्हे बहुत मानते थे। इनके इधर–उधर घूमने फिरने पर कभी भी बिगड़ते नही थे। तानसेन मात्र पॉच वर्ष के थे तब उनके मुख से यह पद प्रस्फुटित हुआ–

प्यारे तूँ ही ब्रह्म, तू ही विष्णु, तूँ ही शेष, तूँ ही महेश।
तूँ ही आद, तूँ ही अनाद, तूँ ही नाथ, तूँ ही गणेश।।
जल स्थल मझते त्यो। तूँ ही आकार यम सोम।
तूँ ही आकार तूँ ही मल्हार।
निराकार तूँ ही गणेश। तूँ ही वेद तूँ ही पुराण।
तूँ ही ह्वदीश, तूँ ही कुरान।
तूँ ही ध्यान, तूँ ही ज्ञान, तूँ ही भुवनेश। तानसेन कहे ब्यान
तूँ ही, दैन तूँ ही रमण। तूँ ही करुण, तूँ ही दीनेश।[17]

तानसेन की लोकप्रियता धीरे–धीरे बढ़ती गई एक बार सम्राट अकबर इनके संगीत को सुनकर बड़ा प्रभावित हुआ। उसने तानसेन को अपने राज्य का दरबारी गायक बना लिया बहुत दिनों तक तानसेन सम्राट अकबर के राज्याश्रय मे रहे। तानसेन ने जीवन भर संगीत की साधना की और उनकी साधना निरन्तर चलती रही।[18]

कहा जाता है कि तानसेन के जीवन में पानी बरसानें, जंगली पशुओं को मंत्र मुग्ध करने तथा रोगियों को ठीक करने आदि की अनेक संगीत प्रधान चमत्कारी घटनाएं हुई। यह निर्विवाद सत्य है कि गुरू कृपा से उन्हे बहुत सी राग–रागनियां सिद्ध थी और उस समय देश में तानसेन जैसा दूसरा कोई संगीतज्ञ नही था। तानसेन ने व्यक्तिगत रूप से कई रागों का निर्माण भी किया, जिनमें दरबारी कान्हड़ा, मियां की सारंग, मियां मल्हार आदि उल्लेखनीय है।

इस प्रकार अमर संगीत की सुखद वैखरी बहाता हुआ यह महान संगीतज्ञ मृत्यु के निकट भी आ पहुंचा। दिल्ली में ही तानसेन ज्वर से पीड़ित हुए और अंतिम समय जानकर उन्होंने ग्वालियर जाने की प्रकट की, परन्तु बादशाह के मोह और स्नेह के कारण तानसेन फरवरी, सन् 1585 ई० में दिल्ली में ही स्वर्गवासी हो गए। इच्छानुसार तानसेन का शव ग्वालियर पहुंचाया गया और मुहम्मद गौस की कब्र के बराबर उनकी समाधि बना दी गई। तानसेन की मृत्यु के पश्चात् उनका कनिष्ठ पुत्र विलास खां तानसेन के संगीत

3. स्वामी हरिदास

स्वामी हरिदास एक रससिद्ध भक्त गायक थे। आप वृन्दावन में रहते थे, भक्तों में उनका नाम प्रथम ध्रुपद गायकों की श्रेणी में आता है। आप संगीत सम्राट तानसेन के गुरू थे, इसी से हम उनकी श्रेष्ठता का अनुमान लगा सकते है। आप संगीत कला के महान ज्ञाता और अद्वितीय गायक थे। आपका जन्म संवत् 1537 के भादों मास में सन् 1840 ई० जन्माष्टमी को हुआ था। आप सारस्वत ब्राह्मण थे तथा वृन्दावन में पवित्र यमुना नदी के किनारे रहते थे। आनके पिता का नाम आशुधीर था तथा माता का नाम गंगादेवी। यह भी कहा जाता है कि संगीत साधना से उन्हें ईश्वर

के दर्शन भी प्राप्त हुये।[19]

स्वामी हरिदास ने तानसेन को कैसे अपना शिष्य बनाया, इसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि एक बार हरिदास स्वामी अपनी शिष्य मंडली के साथ बालक तानसेन के बाग से होकर गुजरे–इस बाग की बालक तन्ना रखवाली किया करता था और अपनी मधुर आवाज से जोर से बोलता था, स्वामी हरिदास ने तन्ना की आवाज से प्रभावित होकर ही उसे अपना शिष्य बना लिया। यही तन्ना बड़ा होकर जब अकबर के दरबार में गायक नियुक्त हुआ तो वह अकबर के समक्ष प्रतिदिन अपने गुरू स्वामी हरिदास की प्रशंसा किया करता था। अकबर संगीत प्रेमी तो था ही, अतः उसके मन में स्वामी हरिदास से मिलने और उनका गाना सुनने की तीव्र उत्कंठा उत्पन्न हुई। तानसेन ने उन्हें बता दिया था कि स्वामी जी किसी के सामने अपना गायन नही सुनाते है, अतः अकबर तानसेन के साथ वृन्दावन गये और उनहोंने स्वामीजी की कुटिया के निकट एक झाड़ी में छिपकर उनका गायन सुना। उनका गायन सुनकर अकबर बहुत प्रशंन्न हुए। स्वामी हरिदास को जब इस बात का आभास हुआ तो वह तानसेन पर थोड़ा क्रोधित हुये, परन्तु उन्होंने बादशाह अकबर को सम्मान सहित अपनी कुटिया में बुलाया। अकबर ने स्वामीजी के चरण स्पर्श किये और उनसे दरबार में चलने के लिए आग्रह किया, परन्तु स्वामीजी ने यह आग्रह स्वीकार नही किया और सुत्यु पर्यन्त वृन्दावन ही रहे। उनकी मृत्यु सम्बत् 1664 में हुई। आज भी वृन्दावन में प्रतिवर्ष भाद्रपक्ष शुक्ल अष्टमी को हरिदास जयन्ती मनायी जाती है।[20]

आपको भारतीय संगीत में सदैव रसिक शिरोमणि और एक भक्त गायक के रूप में जाना जावेगा। आप एक ऐसे संसार त्यागी विरक्त संत थे, जिनकी गायन कला उनके उपास्य ठाकुर बिहारीजी के लिए ही अर्पित थी। आजकल वज्र में जो रासलीला प्रचलित है, उसका स्वामी हरिदास की ही देन समझना चाहिए। स्वामी हरिदास जी का भारतीय संगीत का संरक्षक माना जाता है।

रचनाएंः– स्वामी हरिदास जी का महत्व एक महान संत होने के कारण है परन्तु उनकी रचनाएं अपना प्रथम महत्व रखती है। यह रचनाएं भक्तों में वेदों के समान मान्य है।

उन्होंने 128 ध्रुपद लिखे, इनमें से 18 सिद्धांत के पद और 108 ''केलिमाल'' के नाम से प्रसिद्ध है। आज का साधारण संगीतज्ञ उन्हें भले ही न गा सके, पर ध्रुपद शैली का अभ्यस्त गायक इन ध्रुपदों को अच्छी तरह गा सकता है। इनके ध्रुपद इन्हें भक्त कवियों में विशिष्ट स्थान प्रदान करते है, यह विशिष्टता उनके व्यक्तित्व, संगीत, भक्ति और उपासना में है।[21]

उनकी रचनाओं में गायन, वादन और नृत्य से संबंधित अनेक पारिभाषिक शब्द, वाद्य यंत्रों के नाम और उनके बोल तथा नृत्य की अनेक मुद्राओं के संकेत और तालों के संकेत मिलतें है। वे विख्यात संगीत शास्त्री होने के साथ–साथ वैष्णव धर्म के अंर्तगत एक विशिष्ट भक्ति संप्रदाए के प्रर्वतक भी माने जाते है। श्री विनयचन्द्र मौदगल्य के अनुसार स्वामी हरिदास ही ''आधुनिक हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति के प्रर्वतक है आधुनिक काल में प्रचलित ख्याल गायन का आधार भी उनके समय के ध्रुपद ही है।''

4. बैजू बावरा

ग्यारहवीं सदी के भारत के एक महत्वपूर्ण व्यापारिक शहर चंदेरी को आजकल लोग उसके मशहूर सिल्क के कपड़ों का वजह से जानते है। हालांकि उसकी एक और महत्वपूर्ण पहचान हैं जिस पर आमतौर पर लोगों का ध्यान कम ही जाता है। चंदेरी वो जगह भी है जहां विश्वविख्यात संगीत सम्राट बैजू बावरा ने अंतिम सांस ली थी और यहां उनकी समाधि भी है।

बैजू बावरा अपने समय का ऐसा संगीत का सितारा था जिसके आगे तानसेन जैसे गायक भी नतमस्तक थे। बैजू बावरा का जन्म गुजरात के चापानेर ग्राम लगभग सन् 1455–60 में एक ब्राहम्ण कुल में हुआ था। बैजनाथ मिश्र इनका असली नाम था। बाल्यकाल में ही पिता का स्वर्गवास हो गया था।[22]

बैजू की मां बड़ी धार्मिक वृत्ति की महिला थी, एवं भगवान कृष्ण की उपासिका थी। एक बार स्वामी हरिदास उधर से गुजरे उनकी दृष्टि बैजनाथ की प्रतिभा को पहचान कर अपने आश्रम में शरण दे दी। बैजनाथ स्वामीजी के संरक्षण में संगीत साधना करने लगे। संगीत सीखने के कुछ समय बाद राजा मानसिंह के आग्रह पर वे ग्वालियर आ गये। उनकी रानी मृगनयनी संगीत प्रेमी थी। राजा के आग्रह पर उन्होंने रानी को संगीत सिखाया। ग्वालियर में रहते हुए होरी गायकी की एक नवीन प्रणाली का अविष्कार किया, साथ ही गूजरी तोड़ी, मृगरंजनी तोड़ी, मंगल गूजरी आदि अनेक नए रागों को बनाया। प्रचलित धमार ताल का भी निर्माण बैजू ने ही किया। 'ग्वालियर संगीत विद्यापीठ की स्थापना राजा मानसिंह एवं रानी ने बैजू बावरा की प्रतिमा को अमर बनाने के लिए ही की। उनके विचित्र स्वभाव के कारण लोग उनको बावरा कहते थे। कोई कहता है कि बावर सम्प्रदाय के होने के कारण ऐसा नाम पड़ा।[23]

'राग–कल्पद्रुम' में बैजू के अनेक ध्रुपद मिल जाते हैं, किन्तु संत संगीतज्ञ बैजू का प्रमाणिक जीवनवृत्त कहीं भी प्राप्त नहीं होता। उसके सम्बन्ध में जो थोड़ी सी जानकारी मिलती है वह जन श्रुतियों और किवदंतियों पर आधारित है। बैजू से सम्बंधित कुछ किवदंतिया निम्नलिखित हैं,

- बैजू मानसिंह तोमर का समकालीन और उसका दरबारी गायक था। उसके सहयोग से ही मानसिंह ने ध्रुपद शैली का आविष्कार और प्रचार किया।
- बैजू ने स्वामी हरिदास से संगीत की शिक्षा प्राप्त कर तानसेन को गायन–प्रतिद्वन्दिता में हरा दिया।
- हरिदास स्वामी के शिष्यों में बैजू, गोपाल और तानसेन मुख्य थे। वे तीनों समकालीन थे।

प्रथम किंवदन्ती के अनुसार बैजू मानसिंह तोमर का समकालीन और उसका दरबारी गायक था, काफी प्रसिद्ध है। इसी के आधार पर वृन्दावन लाल वर्मा ने 'मृगनयनी' नामक नाटक की रचना की है।[24]

दूसरी किवदन्ती, तानसेन और बैजूबावरा की संगीत–प्रतियोगिता को भी कोई ऐतिहासिक आधार नहीं प्राप्त होता, केवल 'बैजू बावरा' नामक फिल्म में दोनों की प्रतियोगिता दिखाई गई है। मनोरंजन के लिये फिल्मों में कुछ काल्पनिक घटनायें जोड़ दी जाती हैं, शायद यह भी ऐसी ही घटना हो।[25]

'नाद विनोद' में स्वामी हरिदास के प्रमुख शिष्यों का नाम उल्लेख हुआ है। साथ ही गोपाल लाल, मदन राय, रामदास, दिवाकर, पं० तन्ना मिश्र, सोमनाथ पंडित और राजा सौरसेन को प्रमुख शिष्यों में रखा गया है। बैजू और गोपाल का समकालीनता के कई प्रमाण हैं। 'राग कल्पद्रुम' में अनेक प्राचीन ध्रुपदों का संकलन है जिनमें कुछ बैजू के भी हैं। नीचे एक ध्रुपद की पंक्तियों को देखिये जिसमें बैजू गोपाल को सम्बोधित कर रहे हैं–

धारू धुरपद–प्रबन्ध–छन्द गीत गुनी मात्रा चतुरंग,
त्रेवट तिल्लानी देस–विदेस, भाषा संस्कृत विसेख।
कहै 'बैजू बावरे' सुन हो गोपाल नायक,
हिरन बोलावै, पाहन पिघलावै, तेरी लाख, मेरी एक।। [26]

संदर्भ सूची

1. भारतीय शास्त्रीय संगीतः मनोवैज्ञानिक आयाम, डॉ॰ नाहर साहित्य कुमार, पृ॰ सं॰ 1।

2. भारतीय शास्त्रीय संगीतः मनोवैज्ञानिक आयाम, डॉ॰ नाहर साहित्य कुमार, पृ॰ सं॰ 2।
3. उत्तर भारत में संगीत शिक्षा, कपूर तृत्प, पृ॰ सं॰ 1।
4. संगीत विशारद, बसन्त, पृ॰ सं॰ 48।
5. उत्तर भारत में संगीत शिक्षा, तृत्प कपूर, पृ॰ सं॰ 2।
6. डां. राधिका शर्मा, भारतीय संगीत को संस्थानों और मीडिया का योगदान, पृ॰ सं॰ 115।
7. डां. राधिका शर्मा, भारतीय संगीत को संस्थानों और मीडिया का योगदान, पृ॰ सं॰ 116–117।
8. पं० हरिशचन्द्र श्रीवास्तव, 2013। हमारे प्रिय संगीतज्ञ, षष्टम संस्करण पृ॰ सं॰ 223।
9. नईम कुरेशी, 2010। ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर, पहला संस्करण, पृ॰ सं॰ 25।
10. डॉ० सुखदेव सिंह सेंगर । आईने अकबरी, रागदर्पण–फ़कीरुल्ला।
11. पं० जगदीश नारायण पाठक, 1999। संगीत शास्त्र प्रवीण, पृ॰ सं॰ 77।
12. नईम कुरेशी, ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर पृ.स. 25।
13. नईम कुरेशी, ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर पृ.स. 51।
14. अबुल फ़जल – आईने अकबरी
15. ध्रुवपद शैली पर मानकोतुहल– मानसिंह तोमर।
16. डॉ० नीरा शर्मा, 2004। अष्टछाप संगीत– एक विश्लेषण, प्रथम संस्करण पृ॰ सं॰ 67।
17. वसन्त, 2007। संगीत विशारद पृ॰ सं॰ 484–487।
18. हरिशचंद्र श्रीवास्तव, 2013। हमारे प्रिय संगीतज्ञ, षष्टम संस्करण पृ॰ सं॰ 42।
19. डॉ० पराजपें – तानसेन समारोह स्मारिका, 1969।
20. राधे श्याम द्विवेदी– चमत्कारों का सृष्टा – लोक कथाओं मे 1971।
21. सारिका अग्रवाल, तानसेन संगीत समारोह एक सांस्कारिक प्रस्तुति पृ॰ सं॰ 21।
22. पं० जगदीश नारायण पाठक, 1999। संगीत शास्त्र प्रवीण, पृ॰ सं॰ 84–85।
23. तानसेन समारोह स्मारिका, 2012, 2013 एवं 2014।
24. स्वतंत्र शर्मा, 1996। भारतीय संगीतः वैज्ञानिक विश्लेषण, तृतीय संस्करण, पृ॰ सं॰ 305।
25. हरिशचंद्र श्रीवास्तव, 2013। हमारे प्रिय संगीतज्ञ, षष्टम संस्करण पृ॰ सं॰ 94–95।
26. स्वदेश न्यूज पेपर। महान गायक बैजू बावरा, 5 फरवरी, 2010।